|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 12: भक्तियोग

2/2 (श्लोक 10-20), शनिवार, 30 सितंबर 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/QuCa8uPxG6U

भक्ति मार्ग का महत्व

विवेचन सत्र का शुभारम्भ दीप प्रज्वलन तथा गुरु वन्दना के साथ हुआ। आज सर्वप्रथम आदि योगी भगवान महेश्वर, कृष्ण योगेश्वर, जगद्गुरु शङ्कराचार्य तथा गुरुदेव गोविन्द देव जी महाराज को नमन किया गया तथा इस सत्र का शुभारम्भ किया गया। इस अध्याय को भक्ति योग बताया गया है।

पिछले भाग में हमने यह सुना कि अर्जुन पूछते हैं कि सगुण की उपासना श्रेयस्कर है या निर्गुण की? आगे भगवान ने सरलतम उपाय भक्ति योग का उपदेश दिया। निर्गुण की उपासना में कई प्रकार के क्लेश हैं। इसमें भगवान ने बताया कि आत्म संयम एवं निग्रह यह आवश्यक मापदण्ड हैं। शरीर द्वारा पञ्च इंद्रियों पर नियन्त्रण पाना बहुत कठिन काम है। हम लोगों को तो उपवास के दिन भी मन में कुछ न कुछ खाते रहने के विचार आते रहते हैं, जबकि नियम यह है कि यदि विचार किया तो उपवास भङ्ग हो गया, और दूसरा मापदण्ड है समत्व की भावना, जो देखने में अत्यन्त आसान प्रतीत होती है। कब पञ्च इन्द्रियों के संयम का बांध टूट जाए कोई भरोसा नहीं है। इसलिए आसान उपाय है भक्ति मार्ग। भक्ति मार्ग में हमें कुछ नहीं करना। हमें तो केवल योगेश्वर श्री कृष्ण के पास बैठकर, सवारी करनी है, बाकी सब कृष्ण स्वयं सम्भालेंगे। भगवान कहते हैं कि तुम्हें यह भी कठिन लगता है तो मैं तुम्हें और सरलतम मार्ग पर ले चलता हूँ। इसी अध्याय के छठे श्लोक में भगवान ने कहा कि तुम्हें नया कुछ नहीं करना है जो कार्य कर रहे हो, वही करते रहो परन्तु मुझे निमित्त मानते हुए। कर्म करें तो विचार मेरा रहे तेरे मन में। कर्म तो हम सब करते रहते हैं परन्तु बीच में ईश्वर को भूल जाते हैं।

भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि यदि यह भी कठिन लगता है तो एक काम कर मन और बुद्धि को एक कर ले। अब अगर मन और बुद्धि को एक दिशा में लगाना, समर्पित करना भी कठिन लगता है तो भी कोई बात नहीं क्योंकि भगवान मातृवत् प्रेम करते हैं और उससे भी आसान मार्ग बता दिया कि सिर्फ अपना काम करते चल, इसका अभ्यास करते चलो।अगर यह भी कठिन लगता है तो उसका समाधान आगे के श्लोक में भगवान बता रहे हैं।

12.10

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि, मत्कर्मपरमो भव|

मदर्थमपि कर्माणि, कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि||10||

(अगर तू) अभ्यास (योग) में भी (अपने को) असमर्थ (पाता) है, (तो) मेरे लिये कर्म करने के परायण हो जा। मेरे लिये कर्मों को करता हुआ भी (तू) सिद्धि को प्राप्त हो जायगा।

विवेचन: अभ्यास मतलब भक्ति योग का निरन्तर प्रयास। हम लोग अभ्यास का मतलब पढ़ना समझ लेते हैं। नहीं, इसका मतलब यह नहीं है, इसीलिए तो स्वामी जी कहते हैं गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लाएं।
भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं कि तू जो भी काम करे, वह ऐसा भाव रख कि मेरे लिए कर रहा है। जैसे सुबह उठते ही सबसे पहले भगवान को याद करें। प्रसन्न हों कि आज हम फिर उठ सके, भगवान का आशीर्वाद है। सबसे पहले मैं उन्हीं के दर्शन करूंगा। स्नान कर रहे हैं, तब मन में यह भाव आए कि मन में ईश्वर है। मैं उन्हीं के लिए स्वच्छता धारण कर रहा हूँ।

देह देवाचे मन्दिर

दुकान जा रहे हैं तो भी मन में यह भाव रहे कि अब मैं चल पड़ा हूँ, यही मेरी प्रदक्षिणा है। भगवान योगेश श्री कृष्ण कहते हैं कि तू काम तो वही कर जो दिन प्रतिदिन करता है परन्तु मन में यह भाव धारण कर कि यह सब काम मेरे लिए कर रहा है। दुकान पहुँच कर अपने ग्राहक के आने पर उसका मुस्कुराकर स्वागत करते हुए, उसकी इस प्रकार सेवा करें, जैसे यह समझो कि मैं स्वयं आया हूँ। श्री कृष्ण कहते हैं कि मेरे लिए कर्मों को करता हुआ तो परम सिद्धि को प्राप्त हो जाएगा। ऐसी कई अनुभव हमने उनकी कक्षाओं के शुरू में देखे हैं। एक सच्ची घटना है कि एक माता के दो सन्तान उत्पन्न हुई जो की अति गम्भीर अवस्था में थी। एक था बेटा एक थी बेटी। बेटी तो बच गई परन्तु बोल नहीं सकती थी। लकवा हुआ था उसे। नहला धुला कर बिठा दिया जाता। इसी प्रकार काफी समय तक चलता रहा। किसी प्रकार Learn Geeta लर्न गीता के बारे में उन्हें पता चला तो उन्होंने उसे कक्षा ज्वाइन करवा दी। मोबाइल लगा कर बैठा देते थे। वह बिटिया लेवल 2 तक पहुंच गई पर बोल नहीं पाती थी। अभ्यास करते-करते आज यह स्थिति है कि वह बोलने लगी और पीछे वाली सारी परीक्षाएं पार करके गीताव्रती की तैयारी कर रही है।

मूकम् करोति वाचालं पंगुम् लंघयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहम् वन्दे परमानन्द माधवम्॥

12.11

अथैतदप्यशक्तोऽसि, कर्तुं(म्) मद्योगमाश्रितः|
सर्वकर्मफलत्यागं(न्), ततः(ख्) कुरु यतात्मवान्||11||

अगर मेरे योग (समता) के आश्रित हुआ (तू) इस (पूर्व श्लोक में कहे गये साधन) को भी करने में (अपने को) असमर्थ (पाता) है, तो मन इन्द्रियों को वश में करके सम्पूर्ण कर्मों के फल की इच्छा का त्याग कर।

विवेचन: प्रारम्भ में थोड़ा दमन करना पड़ता है। आगे के अध्ययन में लेवल दो में दमन को भी दैवी सम्पदा बताया गया है। शुरू में तीन दिन तक आपको दमन करना पड़ता है जैसे कि वजन घटाने के लिए, 3 दिन में ही परिणाम आ जाएँगे और रात की भूख आधी हो जाती है, जिससे सुबह जल्दी उठकर व्यायाम, प्राणायाम करने की आदत पड़ जाती है। शरीर सन्तुलन की अवस्था में आने लगेगा।

समत्वं योग उच्यते।

श्रीमद्भगवद्गीता के श्लोक जब हम बोल रहे होते हैं, तब अपने आप ही हमारा प्राणायाम हो रहा होता है, क्योंकि सारी गीता छन्दबद्ध गीत है, जिसे हम जब जोर से कहते हैं तो साँस पर अपने आप एक कन्ट्रोल आता है। प्राणायाम हो जाता है। यह नियन्त्रण भी कई प्रकार की बीमारियों को ठीक कर रहा है। कई लोगों का दमा ठीक हो रहा है और जिनको साँस के कई प्रकार के रोग थे, उनके स्टेरॉयड बन्द हो गए, उनके इनहेलर्स बन्द हो गए। अद्भुत चमत्कार घटने लगा। लोग पहाड़ों पर

चढ़ने लग गये।

लङ्घयते गिरिम्।

भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि सब कर्म करते हुए भी उसके फल की आकाँक्षा को त्याग दे। यानि फलां काम करने से मेरा मान होगा या मैं अपने बॉस की चापलूसी करूं तो मुझे यह फायदा होगा या और भी जीवन में घटने वाले कई क्रिया-कलाप। Peak performance (पीक परफॉर्मेंस) तब होगा जब आप फल की अपेक्षा का बोझ अपने सर से उतार देंगे।

एक बार अकबर और बीरबल बहुत तेज बारिश होने के चलते जङ्गल में अटक गए। थोड़ा आगे बढ़े तो उन्होंने देखा कि एक पानी का नाला पूरी तरह भर चुका था और एक लकड़हारा सर पर लड़कियों का गट्ठर उठाए, बहुत तेज गति से दौड़ते हुए नाला पार कर जाता है। यह देखकर अकबर बहुत प्रसन्न हो जाते हैं और उसे अपने पास बुलाकर कहते हैं कि एक बार फिर से नाला पार करो तो मैं तुम्हें सोने का सिक्का दूँगा। अब इस बार लकड़हारा प्रयास करता है और फिसल कर गिर जाता है । तभी बीरबल - हँसने लगते हैं तो अकबर कहते हैं कि हँसने का कारण बताओ? बीरबल ने कहा कि महाराज पहले यह केवल लकड़ियों का गट्ठर सिर पर उठा कर चल रहा था। इस बार सोने के सिक्के का बोझ भी उठा कर दौड़ रहा था, सो असफल हुआ। इसी प्रकार हमें भी फल की आकाँक्षा का बोझ सिर से उतार कर, केवल कर्म करना है। जीवन में हम सब अर्जुन हैं और हमें फल की चिन्ता का त्याग करना है।

हमें इस अवस्था से मुक्त हो जाना है कि मैंने इतनी पढ़ाई की तो मेरे इतने अङ्क आने चाहिएं, मैंने इतना काम किया तो मुझे पैसे मिलने चाहिएं। इन्वेस्टमेण्ट किया तो रिटर्न आना चाहिए। मेहमानों की इतनी खातिरदारी की तो जब मैं उनके यहाँ जाऊँ तो वह भी मेरी आवभगत करें। इस प्रकार कर्म फल की अपेक्षा, बाद में आपको हतोत्साहित करती है।

ऐसे एक बार की घटना है कि नेपाल से एक माँ जो गीता कक्षा में पढ़ती है, ने अपनी दुविधा बताई कि मेरा बेटा हॉवर्ड विश्वविद्यालय में जाने की परीक्षा की तैयारी कर रहा है और दो बार असफल होकर अब डिप्रेशन में चला गया है, तब एक भद्र पुरुष जो गीता सेवी भी हैं, उन्होंने उससे बात की और समझाया कि तुम इसलिए मत पढ़ो कि तुम्हें विश्वविद्यालय में दाखिला लेना है, बल्कि तुम अपने ज्ञान की वृद्धि के लिए पढ़ो। परिणाम स्वरुप एक माह बाद माँ का फोन आया कि मेरे बेटे का दाखिला हो गया है। भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण कह रहे हैं कि कर्म फल की अपेक्षा का बोझ त्याग कर मात्र अपने कर्म पर पूरा ध्यान केन्द्रित करो।

12.12

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्, ज्ञानाद्ध्यानं(वँ) विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्याग:(स्),त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्॥12.12॥

अभ्यास से शास्त्रज्ञान श्रेष्ठ है, शास्त्रज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है (और) ध्यान से (भी) सब कर्मों के फल की इच्छा का त्याग (श्रेष्ठ है)। क्योंकि त्याग से तत्काल ही परम शान्ति प्राप्त हो जाती है।

विवेचन: भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण कह रहे हैं, यदि जीवन में तत्काल शान्ति का अनुभव करना है तो हमें त्याग की तरफ बढ़ना होगा। जब जीवन में किसी प्रकार की अपेक्षाओं का बोझ नहीं होगा, तब मन शान्त अवस्था को प्राप्त हो जाता है। आपने जीवन में अनुभव किया होगा कि जिस क्षण आप पूरी तन्मयता से काम में डूब जाते हैं और सोचते हैं कि बस मैं तो अब यह काम कर रहा हूँ, फिर जो होगा देखा जाएगा। तब उस रात आप पूरी शान्ति से सो पाते हैं और सुबह उठते हैं तो एकदम तरोताजा महसूस करते हैं। मतलब आप अपने पूरे दिन के काम ज्यादा ऊर्जा से कर पाएँगे। और ज्यादा ऊर्जा से काम करने पर बहुत बड़ा फल मिलेगा लेकिन कर्म फल की अपेक्षा को छोड़ देना है। श्रीमद्भगवद्गीता का यह श्रेष्ठतम और व्यवहारिक उपदेश है। महाभारत धारावाहिक में हम सब यह सुनते हुए बड़े हुए हैं।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

तब इसका अर्थ समझ नहीं आता था, अब जब से लर्न गीता का कार्यक्रम शुरू हुआ है, तब से जाना कि शब्द को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर उसका अर्थ समझ लेना आसान होता है। यहाँ से मालूम हुआ कि हमें सिर्फ अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए। यदि व्यवस्थित काम करने हैं, जीवन में यदि श्रेष्ठतम काम करने हैं। अर्जुन को विजयी बनाना है। श्रीमद्भगवद्गीता का पहला उद्देश्य है अर्जुन को विजयी बनाना अर्जुन का पराक्रम अर्थात हमारा पराक्रम। हम जीवन में यशस्विता को प्राप्त करें, जो श्रीमद्भगवद्गीता का उद्देश्य है। गीता बुढ़ापे का शास्त्र नहीं है। गीता जवानी का शास्त्र है। युद्ध के मैदान पर अर्जुन को दिया गया यह शास्त्र। लड़ने वाला युवा अर्जुन, पराक्रमी अर्जुन जिस मार्ग पर चला हमें भी उसी प्रकार यदि अपने पराक्रम की ओर बढ़ना है, आकाश का लक्ष्य प्राप्त करना है तो अपने ऊपर से फल की अपेक्षाओं का बोझ उतार फेंकना होगा। **जैसे ही अपेक्षाओं का बोझ उतरेगा हम परम शान्ति को प्राप्त हो जाएंगे।**

मैंने अपने बच्चों को बड़ा किया, उनकी सेवा की, अब जब मैं बूढ़ा हो जाऊँगा तो वह मेरी सेवा करेंगे। यह अपेक्षा रखना बहुत बड़े दर्द को आमन्त्रण देना है। आपने उनकी परवरिश करके अपना कर्तव्य पूरा किया है। यदि यह भाव रखें कि जीवन के कुछ साल मेरा बच्चा मेरे साथ बिता चुका है, अब वह अपना जीवन जी रहा है और मैं अपना। ऐसा भाव रखने से जब बच्चे चार दिन के लिए मिलने आएँगे तो आप अति प्रसन्न हो जाएँगे। यदि बच्चों ने मुझे सम्भाला नहीं, उन्होंने मेरे लिए अमुक कार्य नहीं किया, इस प्रकार के भाव मन में रखेंगे तो आप अशान्ति से घिर जाएँगे। बिना शान्ति के जीवन का आगे बढ़ना मुश्किल लगने लगता है, परन्तु यह असम्भव नहीं है। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण ने जो सूत्र अर्जुन को दिया है, हमें भी उसको धारण करना होगा। मुझे फल की चिन्ता को दूर रखकर केवल अपने काम पर ध्यान देना है।
जब पाण्डव अज्ञातवास में गए और अर्जुन बृहन्नला के वेश में थे। कौरवों ने विराट राज्य पर दोनों तरफ से हमला कर दिया था तो एक तरफ राजा स्वयं गए थे, दूसरे मोर्चे पर अर्जुन ने सम्भाला। तब अर्जुन ने उत्तर को सन्देश दिया कि मैं अज्ञातवास में हूँ, मैं अर्जुन हूँ, मैं युद्ध कर सकता हूं और उन्होंने उत्तर को बलपूर्वक तैयार किया कि तुम सिर्फ रथ पर बैठे रहना, बाकी सब मैं करूँगा। अर्जुन ने सारे कौरव, भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य सबको परास्त किया। अर्जुन की विजय और पराक्रम के लिए योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश दिया है, इससे पहले भी अर्जुन ने सारे गन्धर्वों को हराकर कौरवों की रक्षा की थी।

12.13, 12.14

अद्वेष्टा सर्वभूतानां(म्), मैत्रः(ख्) करुण एव च|
निर्ममो निरहङ्कारः(स्), समदुःखसुखः क्षमी||13||
सन्तुष्टः(स्) सततं(यँ) योगी, यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिः(र्), यो मद्भक्तः(स्) स मे प्रियः॥12.14॥

सब प्राणियों में द्वेषभाव से रहित और मित्र भाव वाला (तथा) दयालु भी (और) ममता रहित, अहंकार रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वश में किये हुए, दृढ़ निश्चयवाला, मुझ में अर्पित मन बुद्धि वाला जो मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है। (12.13-12.14)

विवेचन: भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं कि सारे जीवों के लिए अद्वेष्टा बन। किसी के लिए भी तुम्हारे मन में द्वेष न हो। यदि कोई हिंसक प्राणी भी आ जाए, जिससे भागने का कार्य सिर्फ स्वयं की रक्षा के लिए करें, न कि किसी को हानि पहुँचाने के लिए। मैत्री का भाव हो, करुणा का भाव हो। यह भक्त के प्रमुख लक्षण हैं। इसीलिए हमारे यहाँ साँपों का पूजन किया जाता है। नाग पञ्चमी के दिन नागों का पूजन किया जाता है। बैलों की पूजा की जाती है। बच्छ बारस के दिन गाय की पूजा की जाती है। हम कुत्ते के लिए रोटी निकालते हैं। चीटियों के लिए शक्कर रखते हैं। कितना समृद्ध है, हमारा शास्त्र ज्ञान।

और प्रमुख लक्षण है ममता रहित। ऐसा नहीं होना चाहिए कि सिर्फ हम अपने बच्चों को कुछ खिला रहे हैं। नहीं, अगर खिला रही हैं तो घर के सब बच्चों का उसमें हिस्सा है। अहङ्कार से रहित होना, सुख दुःख दोनों में समभाव रखना, उसमें भीतरी सन्तुष्टि होती है। दृढ़ निश्चयी, शरीर मन और बुद्धि पर निग्रह करने वाला। हमें भगवान का प्रिय भक्त बनने के लिए मन और

बुद्धि दोनों अर्पित करने होंगे। इन दोनों के समर्पण के लिए पहले आवश्यक शर्त है, श्रद्धा का भाव होना। योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं, अर्जुन! इन लक्षणों से युक्त भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय है।

12.15

यस्मान्नोद्विजते लोको, लोकान्नोद्विजते च यः|
हर्षामर्षभयोद्वेगैः(र्), मुक्तो यः(स्) स च मे प्रियः||15||

जिससे कोई भी प्राणी उद्विग्न (क्षुब्ध) नहीं होता और जो स्वयं भी किसी प्राणी से उद्विग्न नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (ईर्ष्या), भय और उद्वेग (हलचल) से रहित है, वह मुझे प्रिय है।

विवेचन: जिसके कारण किसी भी प्राणी को कोई पीड़ा नहीं पहुँचती। कई बार हम अपने आसपास देखते हैं कि किसी ने कुत्ते पर पत्थर फेंक दिया, गाय की पूँछ मरोड़ दी। ऐसे या किसी भी तरह किसी जानवर को हानि पहुँचाना बहुत ही बुरी बात है। जिसे किसी भी जीव से घृणा नहीं हो। छिपकली, साँप या और भी कोई जानवर है उसे निकालना है तो बड़े सहज भाव से निकाल दे उसे कोई कष्ट न दें। हर्ष, भय और उद्वेग आदि से परे होकर जो समत्व भाव में स्थित हो जाता है, योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं कि वह मेरा प्रिय भक्त है।

12.16

अनपेक्षः(श्) शुचिर्दक्ष, उदासीनो गतव्यथः|
सर्वारम्भपरित्यागी, यो मद्भक्तः(स्) स मे प्रियः||16||

जो अपेक्षा (आवश्यकता) से रहित, (बाहर-भीतर से) पवित्र, चतुर, उदासीन, व्यथा से रहित (औरः सभी आरम्भों का अर्थात् नये-नये कर्मों के आरम्भ का सर्वथा त्यागी है, वह मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

विवेचन: भगवान ने अपने प्रिय भक्त के कुछ लक्षण और भी बताए हैं। अनपेक्ष हों, जैसे कि माता-पिता यह अपेक्षा न रखें कि हमने बच्चों की पालना की है तो बुढ़ापे में हमारे लिए कुछ करेंगे। अपेक्षा न हो और बच्चे फिर कुछ करें तो यह एक अद्भुत आनन्द की स्थिति हो जाएगी। यह सन्तुष्टि आपको शान्ति की ओर ले जाएगी। जीवन के अन्तिम क्षणों में यह शान्ति आपको मुक्ति की ओर ले जाएगी। शुचिता का पालन करने वाला अर्थात बाहर और भीतर दोनों तरफ से शुद्ध। अन्दर बाहर की निर्मलता। मेरे मन में भी किसी दूसरे के लिए बुरा विचार न आए। काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ , मेरा मन सबसे परे हो जाए।

दक्ष यानी चतुर मतलब सावधान।
उदासीन मतलब तटस्थ, सन्तुलित।

जो जो काम मैंने किए हैं, मैंने यह किया, मैंने वह किया। इस भाव को लेकर जो आगे बढ़ते हैं उसका हमें त्याग कर देना है। यह भाव रखना है कि मैंने कुछ नहीं किया। जो कर रहे हैं, ईश्वर कर रहे हैं। मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ। भगवान ने मेरे हाथों से यह काम करवाया है मुझ पर बड़ी कृपा है भगवान की। इस भाव का ही अर्थ है **सर्वारम्भ परित्यागी** योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि ऐसे सारे भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

12.17

यो न हृष्यति न द्वेष्टि, न शोचति न काङ्क्षति|
शुभाशुभपरित्यागी, भक्तिमान्यः(स्) स मे प्रियः||17||

जो न (कभी) हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है (और) जो शुभ-अशुभ कर्मों से ऊँचा उठा हुआ (राग-द्वेष रहित) है, वह भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है।

विवेचन: अपने आसपास यह अनुभव करते रहते हैं कि कुछ लोग बहुत जल्दी हर्षित हो जाते हैं और बहुत जल्दी दुःखी भी हो जाते हैं। यानी कि उनका मूड ऑफ हो जाता है। जैसे कि ट्रेन आने में अभी देरी है तो हमारा मूड ऑफ। ट्रेन आने पर उतनी ही प्रसन्नता का अनुभव। यह आनन्द कुछ देर ही रहता है। ट्रेन के अन्दर जाते ही फिर से मूड ऑफ कि कितनी बुरी बाँस आ रही है या फिर जगह नहीं है या किसी और कमी को लेकर बुरा अनुभव करना। छोटी बातों पर उछल कूद करने वाले लोगों के लिए यह सन्देश है कि वे सन्तुलन में रहें। हर्ष से परे और द्वेष से मुक्त हो जाएँ। छोटी-छोटी बातों पर शोक करना उचित नहीं होता। सुख और दुःख दोनों बाहर से आ रहे हैं। जैसे की अच्छा एसी सुख देगा और अच्छी नींद आना आनन्द की अनुभूति देगा जो कि भीतर से प्रस्तुत होता है। बाहर से आने वाले सुख का अन्त एक न एक दिन अवश्य होगा। बाहरी सुख सुविधाएं हैं तो उत्तम और यदि नहीं हैं तो उनका अभाव आपके मन को उद्वेलित न कर पाए। सब स्थिति में सम होना यही जीवन का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। दिन भर एसी में रहना इसका दूरगामी परिणाम यह होगा कि हमारे फेफड़ों की क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

सुख का अन्तिम छोर है दुःख। लेकिन जो आनन्द भीतर से आता है उसका अन्तिम छोर है परमानन्द।

छोटे बच्चे दिन भर खेलते हैं, पढ़ते नहीं तो परीक्षा परिणाम अच्छा नहीं आता तो दुःख का कारण बन गया। शुभ और अशुभ सारे ही कर्म हमारे हाथों से ही होंगे। कई बार अशुभ काम भी कर्तव्य की भावना से करने होते हैं जैसे कि न्यायाधीश किसी को फाँसी की सजा देते हैं। हमारे शुभ और अशुभ कामों में कर्तव्य की भावना बलवान हो जाए तब हमारा मन भी उसके फल की आकाङ्क्षा से निवृत्त हो जाता है। भगवान कहते हैं कि ऐसे भक्त मुझे सबसे ज्यादा प्रिय हैं। भगवान ने अर्जुन को सूचित किया कि शुभ और अशुभ दोनों काम केवल कर्तव्य की भावना से करना ही श्रेष्ठ है।

12.18

समः(श्) शत्रौ च मित्रे च, तथा मानापमानयोः|
शीतोष्णसुखदुःखेषु, समः(स्) सङ्गविवर्जितः||18||

(जो) शत्रु और मित्र में तथा मान-अपमान में सम है (और) शीत-उष्ण (शरीर की अनुकूलता-प्रतिकूलता) तथा सुख-दुःख (मन बुद्धि की अनुकूलता-प्रतिकूलता) में सम है एवं आसक्ति रहित है (और) जो निन्दा स्तुति को समान समझने वाला, मननशील, जिस किसी प्रकार से भी (शरीर का निर्वाह होने न होने में) संतुष्ट, रहने के स्थान तथा शरीर में ममता आसक्ति से रहित (और) स्थिर बुद्धिवाला है, (वह) भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है। (12.18-12.19)

विवेचनः भगवान कहते हैं कि शत्रु को देखकर भी मन में द्वेष की भावना न पनपे। लर्न गीता कार्यक्रम के अन्तर्गत जेलों के अन्दर भी गीता सिखाई जाती है। भगवान योगेश्वर कृष्ण कहते हैं की मान और अपमान में भी स्थिर रहना सीखना है। हमारे आसपास की एक घटना है। एक बच्चा रोता हुआ आया कि मुझे मेरे दोस्त ने बहुत चिढ़ाया और मैंने भी उसे बहुत गालियाँ दे दीं। बच्चों को समझाया गया कि तुम हार गए हो। वह चाहता था कि तुम क्रोधित हो जाओ और वह सफल हुआ। तुम नहीं चिढ़ते तो वह हार जाता और तुम जीत जाते। यदि किसी ने अपने शब्दों से आपका अपमान कर दिया है तो अपनी भावनाओं का रिमोट कन्ट्रोल सामने वाले के हाथ में देने की कतई आवश्यकता नहीं है। शत्रु मित्र मान अपमान सब में सम रहने का मार्ग है श्रीमद्भगवद्गीता। शीत और ऊष्ण से परे हो जाएँ, द्वन्द्वातीत हो जाएँ।

12.19

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी, सन्तुष्टो येन केनचित्|
अनिकेतः(स्) स्थिरमतिः(र्), भक्तिमान्मे प्रियो नरः||19||

विवेचन: किसी ने आपकी स्तुति कर दी तो आपको बहुत अच्छा लगा। किसी ने निन्दा कर दी तो तुरन्त उदास हो जाते हैं। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि हर स्थिति में सन्तुष्ट रहना ही उचित मार्ग है।

अनिकेत अर्थात महादेव

घर में हैं या बाहर हैं। सब स्थिति में सम रहने का नाम अपने **आसपास की भौतिक वस्तुओं से मन का न चिपकने का नाम है स्थिर बुद्धि वाला मनुष्य।** मुनि अर्थात मनन करने वाला अर्थात जो भगवान के चिन्तन मनन में लगा रहता है। जैसे आकाश स्थिर रहता है चाहे काले बादल आएँ, चाहे सफेद वाला बादल आए। हम सबको उस स्थिति तक पहुँचना है।

एक बार भगवान बुद्ध पर किसी व्यक्ति ने थूक दिया। भगवान बुद्ध ने पूछा, क्या चाहते हो? सभी उसे घृणा की नजर से देखने लगे। वह व्यक्ति बहुत शर्मसार हुआ और रात भर सो नहीं पाया। जब हम गलत कर्म करते हैं, तो हमारे मन में पश्चाताप की भावना रहती है। सुबह उठकर उसने एक पुष्पहार खरीदा और भगवान के बुद्ध के गले में अर्पित किया और भगवान के चरणों में नतमस्तक होकर क्षमा माँगने लगा। भगवान बुद्ध ने फिर पूछा और क्या चाहते हो? तब पास खड़े एक व्यक्ति ने भगवान बुद्ध से पूछा कि आप पहले भी यही कह रहे थे और अब भी कह रहे हैं कि कुछ और कहना चाहते हैं क्या? भगवान बुद्ध बोले कि मेरे मन के भीतर शान्ति है तो बाहरी वातावरण का मुझ पर कोई असर नहीं होता। किसी और के क्रोध की वजह से, मैं अपने मन की स्थिति नहीं बिगाड़ सकता हूँ।

श्रीमद्भगवद्गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं कि स्थिर मति वाले, सब स्थिति में सम रहने वाले भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

12.20

ये तु धर्म्यामृतमिदं(यँ), यथोक्तं(म्) पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा, भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥12.20॥

परन्तु जो (मुझ में) श्रद्धा रखने वाले (और) मेरे परायण हुए भक्त इस धर्ममय अमृत का जैसा कहा कहा है, (वैसा ही) भली भांति सेवन करते हैं, वे मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

विवेचन: भगवान कहते हैं कि वह भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय होते हैं, जो ऊपर कहे हुए धर्म रूपी अमृत को बिल्कुल मेरे कहे हुए अनुसार अनुसरण करते हैं।

इस प्रकार इस अध्याय में योगेश्वर श्री कृष्ण ने भक्त के लक्षण बताए हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के बारहवें अध्याय भक्ति योग के विवेचन सत्र का समापन अन्तिम प्रार्थना और श्री हनुमान चालीसा के साथ हुआ।

:: प्रश्नोत्तर ::

प्रश्नकर्ता- श्रीदिवाकर भैया

प्रश्न- खराब के साथ भी अच्छा करना चाहता हूँ। पर कभी-कभी नियन्त्रण नहीं रहता। क्या करें?

उत्तर- हम मानव शरीर में आए हैं, प्रकृति के साथ दोष आ जाते हैं। अच्छे गुणों के साथ कुछ दोष भी हम में आ जाते हैं। यह राग द्वेष हमें प्रकृति से प्राप्त होते हैं। घर में एक बच्चा बड़ा प्यारा होता है। एक बदमाश होता है, लेकिन माँ दोनों की ओर समदृष्टि से देखती है। उसी प्रकार हममें जो सद्गुण हैं, या दुर्गुण हैं, वे हमारे अपने हैं। उनकी तरफ देखने का हमारा विचार भी समत्व का होना चाहिए। यह जागरण ही, हमें उठा देता है। रात को सोने से पहले लिखें, आज कितनी बार क्रोध आया? उस आदमी देखते ही, मेरे मन में शत्रुता का भाव आया। ऐसा रात को लिखिएगा। फिर परमात्मा को प्रार्थना करके सोना, भागवान आज फिर भूल हो गई, कल जरूर ध्यान रखूँगा। अगले दिन सुबह भी भगवान से कहकर, बाहर निकलें। जब ऐसी घटना घट जाए, तभी जाग जाना, केवल स्वयं के मन से नहीं, जिससे किया है, उससे भी क्षमा माँग लें। ऐसा अभ्यास करते रहने से एक दो सप्ताह में ही यह बात मन से निकल जाएगी और बड़ा आराम मिलेगा।

एक संस्था में मुझसे शत्रुता करने वाले एक व्यक्ति, मुझे चिढ़ाने के लिए,बहुत भला बुरा कहता था। मैंने गीता पढ़ी, तो अपनी

प्रतिक्रिया Reaction देने की बजाय उत्तर Response देना शुरू किया। प्रतिक्रिया तो बिना सोचे समझे होती है। उत्तर सोच समझ कर दिया जाता है। इससे उनमें परिवर्तन आना शुरू हो गया। हमारी मन: स्थिति जब बदलती है, तो हमारे आसपास की परिस्थिति भी बदल जाती है।

प्रश्नकर्ता- दिवाकर भैया

प्रश्न- ऐसे ही कारणों से मेरे मित्र मुझसे दूर हो गए, क्या करें?

उत्तर- निर्ममो निरहङ्कार: समदु:खसुख: क्षमी। 12:13।
अहङ्कार का त्याग करके ही सुख प्राप्त होगा। शत्रुता बड़ी आसानी से मिटाई जा सकती है। हमारा अहङ्कार ही इसमें रूकावट है। जो पहले आपका मित्र था, और अब मित्र नहीं रहा। आप दुबारा उससे मित्रता चाहते हैं, बड़ा आसान है। श्रीमद्भगवद्गीता की पुस्तक उन्हें भेंट में देकर, क्षमा माँग लें।

प्रश्नकर्ता- राजश्री अवति दीदी

प्रश्न- कर्म क्या है?

उत्तर- हमारे विचारों से, हमारी देह से, वाणी से जो कुछ घट रहा है, वह सभी कर्म है। सारे ही कर्म हमसे होते रहते हैं। भले भी बुरे भी। उनके फल की अपेक्षा भी रहती है। मैंने अच्छा किया, लोग मेरी वाह-वाह करें या मुझे इसका प्रतिफल मिले। यह सारी अपेक्षाएँ अर्थात फल। हम फल की अपेक्षा त्याग दें। इससे कर्म की गुणवत्ता बढ़ जाएगी। इसलिए भगवान ने कहा है, कर्मफल की अपेक्षा त्यागो।

प्रश्नकर्ता- श्री अभिराज सिंह भैया

प्रश्न- निष्काम कर्म से व्यवसाय जगत् में स्वयं को प्रतिस्थापित कैसे करें?

उत्तर- कर्म तो करना ही है। अर्जुन ने तो अपना धनुष रख दिया था। भगवान अर्जुन को धनुष उठाने के लिए कह रहे हैं।

ततो युद्धाय नैव पापमवास्यसि। 2:38।

पुरुषार्थ करने में, अपनी ओर से कोई कमी मत रखो। आपने मेहनत की, अच्छा काम किया, फिर भी किसी कारणवश आपको पदोन्नति नहीं मिली। अब आपने काम करना छोड़ दिया। भगवान कहते हैं, अपना काम नहीं छोड़ना है। पदोन्नति की इच्छा से ही काम करोगे, तो मन डोलता रहेगा। कभी इधर कभी उधर। ऐसी अवस्था अच्छी नहीं है। फल की अपेक्षा के बिना कर्म करोगे, तो सुख और दु:ख नहीं आएँगे, आनन्द आएगा।

प्रश्नकर्ता- श्री अभिराज सिंह भैया

प्रश्न- क्या स्वयं की पदोन्नति या अन्य उच्च स्तर हेतु नहीं कहना चाहिए?

उत्तर - अपने किए काम का विवरण देकर कहना चाहिए। भगवान कहते हैं जो आपने कर्म स्वीकार किया है, वही आपका धर्म बने। अपना धर्म निभाएँ। श्रीमद्भगवद्गीता धर्म पर चलने को कहती है। धर्म का सीधा सा मतलब है, कर्तव्य। अपेक्षित फल प्राप्त न होने पर जो मन में उद्वेग उत्पन्न होता है, उससे बचना है, तो फल की अपेक्षा त्याग कर कर्म करो। कर्म कर भी रहे हैं, मन में उद्वेग भी है।

ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ।12:12।

फल की अपेक्षा त्याग देने से, जीवन में शान्ति आ जाएगी। भगवान कहते हैं, अपना कर्तव्य करते रहो। आपको जो मिलना है, मिल जाएगा। पहले से उसके बारे में सोच सोच कर, अपने मन का चैन खराब न करें।

प्रश्नकर्ता- पुष्पा मोहन दीदी

प्रश्न- तामस दान क्या होता है?

उत्तर- यह सोचकर कि घर में बासी रोटी पड़ी है, याचक को दे देते हैं। यह दान अच्छे भाव से नहीं दिया। यह तामस दान है। अपने किसी साहब का सम्मान इसलिए किया, क्योंकि उनसे कुछ अपेक्षा है। यह राजस दान है।

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतम् ।। 17:20।।

काल सुसङ्गत और सुपात्र व्यक्ति को दिया गया दान सात्विक दान कहलाता है। दान आप करते रहें, लेकिन मन में सात्विक भाव बना रहे। यह बात अधिक महत्वपूर्ण है।

प्रश्नकर्ता- पूनम दीदी

प्रश्न- दूसरे अध्याय के श्लोक सत्रहवें की व्याख्या बतावें।

उत्तर-

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न काङ्क्षति न शोचति।
शुभाशुभ परित्यागी भक्तिमान्य: स मे प्रिय: ।।

जो न हर्षित होता है, न द्वेष करता है। न कोई आकाङ्क्षा करता है, न शोक करता है। अपने हाथ से जो भी कर्म कर रहा हूँ, कुछ अच्छे, कुछ खराब जो भी उनके फल हैं, मैं उनका त्याग कर रहा हूँ। राग द्वेष से मुक्त हो रहा हूँ। भगवान कहते हैं, ऐसे मेरे भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय लगते हैं।

प्रश्नकर्ता- चारू दीदी

प्रश्न- परिवार के भले हेतु झूठ बोलना उचित है या अनुचित?

उत्तर- झूठ बोलना या सच बोलना यह सापेक्ष है। कोई पीड़ित महिला कहती है- मुझे छुपा लो। पीछे कोई हिंसक व्यक्ति आकर आपसे पूछता है - क्या उस महिला को देखा है? आप कहते हैं - नहीं। जबकि आपने उसे देखा है। आपने अच्छे कारण हेतु झूठ बोला। ऐसा झूठ पाप नहीं देता। पीड़ित महिला को बचाने का पुण्य उस झूठ से अधिक बड़ा है।ँश्रीकृष्ण ने ऐसा ही झूठ बोलने के लिए धर्मराज युधिष्ठिर को नियुक्त किया था। द्रोणाचार्य आपसे अश्वत्थामा की मृत्यु का पूछने आएं, तो कहना -

अश्वत्थामा हत: वा नरो वा कुञ्जरो

युद्ध में द्रोणाचार्य का मनोबल कम करने हेतु, भगवान ने अश्वत्थामा नामक हाथी को मरवाया।

अश्वत्थामा हत:

यह समाचार मिला तो द्रोणाचार्य ने पुष्टि हेतु धर्मराज युधिष्ठिर के से पूछा। धर्मराज ने जैसे ही कहा - अश्वत्थामा हत: वैसे ही

श्रीकृष्ण ने अपने शङ्ख पाञ्चजन्य से उच्च ध्वनि की। अगला वाक्य **वा नरो वा कुञ्जरो**
द्रोणाचार्य को सुनाई नहीं दिया। वे विषादग्रस्त होकर युद्ध करने लगे और मारे गये। यहाँ झूठ तो बोला गया, लेकिन झूठ किस काम के लिए बोला गया? यह भी देखा जाता है। यदि हमारा झूठ किसी की हानि का कारण बनता है, तो उस झूठ का काँटा बहुत समय तक चुभता रहता है। झूठ बोलना ही, अच्छा है या सच बोलना ही अच्छा ह,! यह सापेक्षता है। धर्म किस ओर है? उस पर निर्भर करता है। सत्य बहुत बड़ा मूल्य है। जहाँ तक हो सके सत्य ही बोलना यह वाणी का तप है।

अनुद्वेकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।17:15।।

सत्य भी बोलो प्रिय भी बोलो और हितकारी भी बोलो। यह वाणी का तप है। कभी झूठ बोलते हैं, तो उसी क्षण अन्दर से हमारा पतन होता ही है। श्रीमद्भगवद्गीता अनुद्वेगकारी और हितकारी सत्य बोलने को कहती है। किसी भले के लिए झूठ बोलना है, यह नीति कहती है। दोनों का सन्तुलन बना कर चलना है।

प्रश्नकर्ता- श्री मुकेश कुमार सहू भैया।

प्रश्न- प्याज लहसुन न खाने का क्या महत्व है?

उत्तर- श्रीमद्भगवद्गीता के सत्रहवें अध्याय में आहार का महत्व समझाया है। तीन प्रकार के आहार हैं- सात्विक, राजस और तामस। लहसुन प्याज तामस आहार है। किसी शारीरिक आवश्यकता में दवा के रूप में खा रहे हैं कॉलेस्ट्रॉल घटाने हेतु, तो ठीक है। यह तामसिक आहार हैं- उदर में गैस भर देता है। पेट में जड़ता हो जाती है। जिस दिन आप प्याज लहसुन खाते हैं - डकारें आती हैं, आप योग नहीं कर पाते हैं। दूसरे क्या कह रहे हैं? या क्या कर रहे हैं? इसका विचार छोड़ दें। आपकी समझ में आ गया है, तो उसका अनुसरण करें।

प्रश्नकर्ता- बजरङ्ग भैया।

प्रश्न- श्री कृष्ण ने अर्जुन को स्वर्ग के भोग या पृथ्वी का राज्य भोगने का प्रलोभन क्यों दिया?

उत्तर- हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं
जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्। 2:37।

यह प्रलोभन नहीं है। यह समत्व की बात है। इसी बात को भगवान ने आगे कहा है -

सुखदु:खे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवास्यसि।।2:38।।

जय और पराजय में भी समान रहो। मायूस न हों। अपना पूरा पराक्रम करें। भगवान यह बात अर्जुन को समझाना चाहते हैं। यह प्रलोभन नहीं है। जीत और हार को समान देखने की दृष्टि भगवान दे रहे हैं।

प्रश्नकर्ता- श्री मुकेश कुमार सहू भैया।

प्रश्न- सिर में शिखा धारण का क्या महत्व है?

उत्तर- सहस्रार चक्र सिर में शिखा का स्थान पर स्थित है। गृहस्थ और ब्रह्मचारी को शिखा धारण करने को कहा जाता है। शिखा को प्रतिदिन बनाने के लिए खींचते हैं। इससे सहस्रार चक्र प्रभावित होता है। यह जान लें, कि सिर पर शिखा धारण करना या दोनों भृकुटियों के मध्य टीका लगाना या कण्ठ में लगाना। इसमें दबाव से हमारे अन्दर के सारे चक्र प्रभावित होते हैं। यह

यौगिक क्रियाएँ हैं, योग से हमारी ऊर्ध्व गति चलने लगती है। यह सब वैज्ञानिक क्रियाएंँ हैं।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(यँ) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'भक्तियोग' नामक बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||